

## आचार्य विमलसागर

आचार्य विमलसागर का जन्म उत्तर प्रदेश के एटा जिले के एक छोटे से गांव कोसमा में 18 सितम्बर, 1916 को हुआ। आचार्य विमलसागर के पिता, श्री बिहारीलाल और माता, श्रीमती कटोरी देवी धार्मिक प्रवृत्ति के थे। परिवार ने नवजात शिशु को तीर्थंकर नेमिनाथ की पावन स्मृति में अत्यंत स्नेह से नेमिचंद्र नाम दिया। नेमिचंद्र की प्रारंभिक शिक्षा-दीक्षा उत्तर प्रदेश के सुप्रसिद्ध मुरैना संस्कृत विद्यालय में हुई, जहां से अनेक पारंपरिक जैन विद्वानों ने दीक्षा प्राप्त की थी। नेमिचंद्र ने पारंपरिक भारतीय चिकित्सा पद्धति का भी अच्छा ज्ञान अर्जित किया और चिकित्सक के रूप में उनकी काबिलियत के कारण आस-पास के क्षेत्रों में उन्होंने काफी प्रतिष्ठा पाई। सांसारिक विषयों में नेमिचंद्र की कोई रुचि नहीं थी। उनमें परित्याग की तीव्र इच्छा थी और वे अध्यात्म के पथ पर अग्रसर होना चाहते थे। इसी दिशा में वे, 20वीं शताब्दी के प्रथम दिगंबर जैन आचार्य, आचार्य श्री शांतिसागर मुनिराज के संपर्क में आए, जिन्होंने फिरोजाबाद में नेमिचंद्र का यज्ञोपवीत संस्कार किया। संन्यासी नेमिचंद्र तप के मार्ग पर निरंतर अग्रसर होते रहे और आचार्य श्री वीरसागर मुनिराज से उन्होंने प्रतिमा व्रत प्राप्त किया।

इसके बाद, युवा नेमिचंद्र जी को 1950 में बड़वानी (मध्य प्रदेश) के पवित्र तीर्थ में उनके गुरु आचार्य श्री महावीरकीर्ति मुनिराज द्वारा क्षुल्लक श्री वृषभसागर मुनिराज की उपाधि प्रदान की गई। क्षुल्लक की इस उपाधि ने उनके तप का मार्ग प्रशस्त किया। इसी राह पर उनके गुरु ने धर्मपुरी में उन्हें क्षुल्लक से ऐलक बनाया और अन्ततोगत्वा उन्हें, 26 फरवरी, 1953 को सिद्धक्षेत्र सोनागीर में दिगंबर मुनि की उपाधि प्रदान की। इस प्रकार, श्री नेमिचंद्र, श्री विमलसागर मुनिराज कहलाए। 5 नवम्बर, 1960 को टुंडला में उन्हें आचार्य की उपाधि प्रदान की गई।

जैन संन्यासी और संन्यासिनें आजीवन पदयात्रा के लिए प्रतिज्ञाबद्ध रहते हैं। अपने जीवनकाल में, आचार्य विमलसागर ने देशभर में 50,000 कि. मी. से अधिक की पदयात्रा की और लोगों को अहिंसा, अपरिग्रह तथा अनेकांत का उपदेश दिया, जो उनके अनुसार विश्व शांति का एकमात्र रास्ता है और जिसके लिए वे आजीवन कृतसंकल्प रहे। उनके मन में संपूर्ण मानवता के लिए करुणा थी। आचार्य विमलसागर, समस्त मानवीय इच्छाओं

के बंधन से मुक्त हो चुके थे। अपने तपस्वी जीवन के दौरान, उन्होंने कुल 3266 दिनों का उपवास रखा और आजीवन अनाज, घी, दही, तेल और नमक ग्रहण नहीं किया। आचार्य विमलसागर ने 100 से अधिक दीक्षा संस्कार संपन्न किए, जिनमें 40 मुनि-दीक्षा तथा 29 आर्यिका माता, 01 ऐलक, 21 क्षुल्लक तथा 17 क्षुल्लिका दीक्षा अनुष्ठान शामिल थे। उनके अंतिम दीक्षित अनुयायी उपाध्याय श्री ऊर्जयंतसागर मुनिराज हैं।

आचार्य विमलसागर ने अनेक पुस्तकों की रचना की। उनके द्वारा संस्कृत में रचित सिद्धचक्र विधान, जिनसहस्रनाम स्तोत्र तथा अन्य रचनाएं सामान्य जन के लिए अमूल्य धरोहर हैं।

आचार्य विमलसागर ने लोगों को जैन संस्कृति को सहेजने और संरक्षित करने को भी प्रोत्साहित किया। उनकी प्रेरणा पाकर अनेक प्राचीन मंदिरों और तीर्थ क्षेत्रों का जीर्णोद्धार तथा कुछ नए मंदिरों का निर्माण किया गया। इनमें शिखरजी का समवसरण मंदिर और राजगीर का सरस्वती मंदिर सबसे महत्वपूर्ण हैं।

आचार्य श्री विमलसागर, समस्त जैन समाज के लिए अत्यंत श्रद्धेय थे। जैन समाज ने आदर एवं स्नेहपूर्वक उन्हें अनेक उपाधियों से अलंकृत किया, जिनमें चरित्र चक्रवर्ती (1962 - बाराबंकी), निमित्त ज्ञानभूषण (1973 - शिखरजी), सन्मार्ग दिवाकर (1979 - सोनागीर), करुणानिधि (1983 - औरंगाबाद), वात्सल्यमूर्ति - अतिशय योगी (1985 - लोहारिया), कलिकालसर्वज्ञ (1990 - सोनागीर), वात्सल्य रत्नाकर (1993 - सोनागीर) आदि शामिल हैं।

29 दिसम्बर, 1994 को आचार्य श्री विमलसागर झारखंड के गिरडीह जिले में तीर्थदिराज सम्मेद शिखरजी में समाधि में लीन हो गए।

डाक विभाग, आचार्य विमलसागर पर स्मारक डाक-टिकट जारी करते हुए प्रसन्नता का अनुभव करता है।

### आभार:-

मूलपाठ : प्रस्तावक द्वारा उपलब्ध कराई गई सामग्री पर आधारित  
डाक टिकट/ प्रथम दिवस आवरण/ विरूपण : श्रीमति अलका शर्मा



### तकनीकी आंकड़े TECHNICAL DATA

मूल्यवर्ग	:	500 पैसा
Denomination	:	500 p
मुद्रित डाक टिकटें	:	4.03 लाख
Stamps Printed	:	0.403 million
मुद्रण प्रक्रिया	:	वेट ऑफसेट
Printing Process	:	Wet Offset
मुद्रक	:	प्रतिभूति मुद्रणालय, हैदराबाद
Printer	:	Security Printing Press, Hyderabad

The above philatelic items are available for sale at [http://www.epostoffice.gov.in/PHILATELY\\_3D.html](http://www.epostoffice.gov.in/PHILATELY_3D.html)

© डाक विभाग, भारत सरकार। डाक-टिकट, प्रथम दिवस आवरण तथा सूचना विवरणिका के संबंध में सर्वाधिकार विभाग के पास हैं।

© Department of Posts, Government of India. All rights with respect to the stamp, first day cover and information brochure rest with the Department.

मूल्य ₹ 5.00



## ACHARYA VIMAL SAGAR

Acharya Vimal Sagar was born on 18th of September 1916 at Kosma, a small village in the district Etah of Uttar Pradesh. His father Shri Biharilal Ji and mother Smt. Katori Devi were religious persons. The new-born in the family was given an affectionate name in the honoured remembrance of the Teerthankar Neminath and the family fondly called him "Nemichandra". Nemichandra got his early schooling in the famous Morena Sanskrit Vidyalaya in U.P., where a very good number of traditional Jain scholars were trained. He also developed a good knowledge of the Indian Traditional Medicine System and was respectfully known in adjoining areas for his abilities as a healer. He had no interest in worldly affairs and had a keen desire for renunciation and moving on the spiritual path. He came in contact of the First Digamber Jain Acharya of the 20th Century; Acharya Shree 108 Shantisagar Jee Muniraj and his Yagyopweet Sanskar was performed in Firozabad by the great Acharya Shree. The ascetic Nemichandra continued to move steadily on the path of penance and took the Pratima-vrata from Acharya Shree 108 Veersagar Jee Muniraj.

Soon after, young Nemichandra was transformed in the new form of Kshullak 105 Shree Vrishabhsagar Muniraj in the holy teerth of Badwani (M.P.) by his Guru Acharya Shree 108 Mahaveerkeerti Jee Muniraj in the year 1950. Kshullak's status paved the way for his moving towards practice of penance and his Guru transformed him from Ksullak to Ailak at Dharmapuri and finally as Digamber Muni, who came to be recognized as Shree 108 Vimalsagar Jee Muniraj, in the Siddhkshetra Sonagir on 26th Feb, 1953. The position of Acharya was bestowed upon him in Tundla on 5th November, 1960.

Jain Monks and nuns remain under a vow of moving on foot all their life. In his lifetime Acharya Vimal Sagar Jee covered more than 50,000 km across the country- preaching Ahimsa, Aparigraha and Anekant- the only ways to world peace,

he had worked for all his life. He was full of compassion towards all mankind. He had risen above the human desires. He fasted on 3,266 days during his ascetic life and never took cereals, ghee, curd, oil and salt throughout his life. He performed more than hundred Deekshas; which include 40 muni-deekshas and deekshas of 29 Aryikamata, 01 ailak, 21 Kshullakas and 17 Kshullikas. His last deekshit disciple is Upadhyaya Shri 108 Urjayantsagar Jee Muniraj.

Acharya Vimal Sagar authored many books. His Siddhchakara Vidhan in Sanskrit, Jinsahasnam Stotra, and other works are treasures for common men and women.

Acharya Vimal Sagar also motivated people to preserve and conserve the Jain culture, and under his influence, many old temples and teerthkshetras were got renovated and some new temples were built; among which, Samavsharan Temple of Shikhar Jee and Saraswati Temple of Rajgrih are the most significant.

Acharya Shree 108 Vimal Sagar Jee was very well respected by the entire Jain Samaj. The Samaj very respectfully and affectionately conferred upon him so many decorations (upadhi's); namely Charitrya Chakravartee (1962-Barabanki), Nimitt Gyanbhushan (1973-Shikharji), Sanmarg Diwakar (1979-Sonagir), Karunanidhi (1983-Aurangabad), Vatsalyamurti-Atishay Yogi (1985-Lohariya), Kalikalsarvagya (1990-Sonagir), Vatsalya Ratnakar (1993-Sonagir) etc.

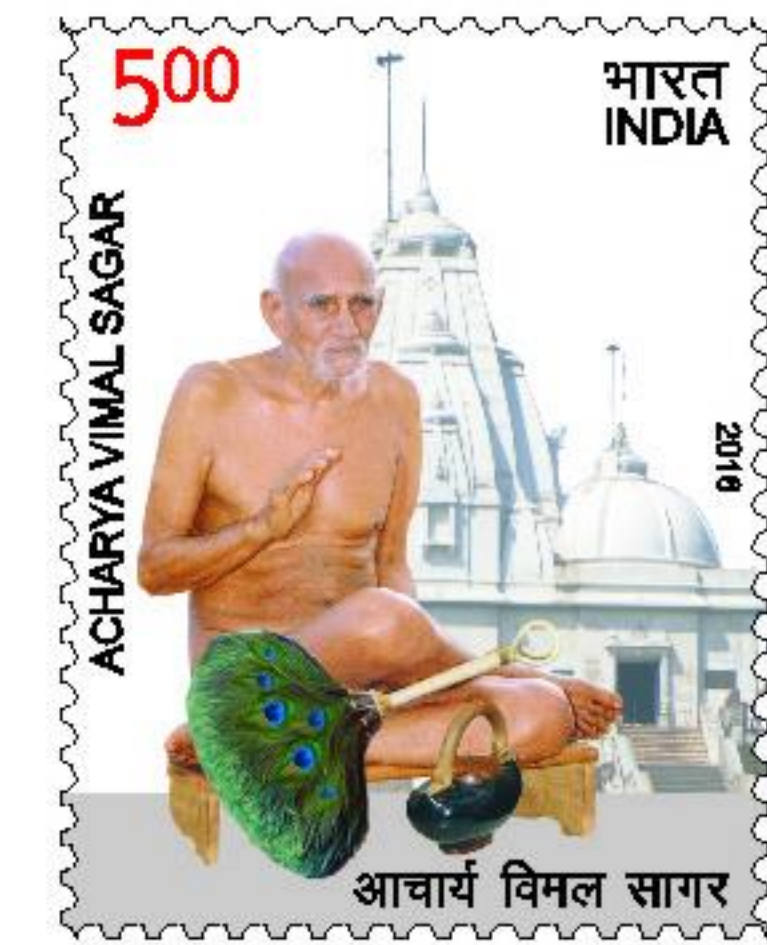
Acharya Shree Vimal Sagar Jee attained his Samadhi on 29th December, 1994 at Teerthadiraj Sammedshikar Jee, Dist- Girdih in Jharkhand.

Department of Posts is happy to release a commemorative postage stamp on Acharya Vimal Sagar.

### Credits:-

Text	:	Based on the material received from proponent
Stamp / FDC / Cancellation Cachet	:	Smt. Alka Sharma

## भारतीय डाक विभाग Department of Posts India



## आचार्य विमल सागर ACHARYA VIMAL SAGAR

## विवरणिका BROCHURE